२६१

सत्संग - ८

- महाराज चरनसिंहजी

"नामु मिलै मनु तृपतीऐ —"
(गुरु रामदास जी)

८

- राधा स्वामी सत्संग, ब्यास

सत्स

सत्संग के वचन

नामु मिलै मनु तृपतीऐ बिनु नामै धृगु जीवासु ।।
कोई गुरमुखि सजणु जे मिलै मै दसे प्रभु गुणतासु ।।

यह चौथी पातशाही श्री गुरु रामदासजी महाराज की वाणी है। इस शब्द में आप बहुत अच्छी तरह से नाम की महिमा करते हैं। वैसे तो हम किसी भी महात्मा की वाणी को लेकर खोज करें तो देखेंगे कि हरएक महात्मा शब्द की महिमा करता है, नाम की महिमा करता है। कोई भी महात्मा जहाँ कोई कौम या मज़हब बनाने के लिये नहीं आता। न ही महात्मा हमारे हाथों में डण्डे और तलवारें देने के लिये आते हैं। वे तो केवल हमारे अन्दर शब्द और नाम की कमाई का शौक और प्यार पैदा करके, हमें देह के बन्धनों से आज़ाद करके परमात्मा से मिलाने के लिये आते हैं। पर आम तौर पर हम दुनिया के जीव ऐसे मालिक के भक्तों और प्रेमियों के जाने के बाद बाहरमुखी हो जाते हैं, कर्म-काण्ड में फँस जाते हैं। हम उनकी शिक्षा को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके कौमों, मज़हबों, मुल्कों की शक्ल देने की कोशिश करते हैं और आपस में लड़ना-भिड़ना शुरू कर देते हैं। हम ऐसा क्यों करते हैं? कभी अपने पेट की ख़ातिर करते हैं, कभी अपनी इज्ज़त और मान-बड़ाई के लिये करते हैं। जिन महात्मा का उपदेश सारे संसार के लिये होता है, जब हम उनके उपदेश को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने की कोशिश करते हैं, आप ही सोच लें कि हम उन मालिक के भक्तों और प्रेमियों के साथ इससे ज्यादा और क्या अन्याय कर सकते हैं! अगर हम पक्षपात रहित हो कर खुले दिल से किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करते हैं तो यही समझ में आता है कि सब महात्मा एक ही वस्तु का उपदेश देते हैं, एक ही वस्तु को प्राप्त करने का शौक और प्यार हमारे अन्दर पैदा करते हैं।

ये जितने भी हमारे धर्म हैं इन सबके अपने-अपने आचार-व्यवहार और रीति-रिवाज हैं, परन्तु जो रूहानियत है, असलियत है, हकीकत है, रूहानियत की बुनियाद है, वह हरएक धर्म की तह में एक ही चीज़ है। उस एक रूहानियत को भिन्न-भिन्न महात्माओं ने भिन्न-भिन्न मज़हबों, मुल्कों और समय में आकर विभिन्न प्रकार से समझाने की कोशिश की है। ऋषियों-मुनियों ने इस रूहानियत को आकाशवाणी कहा है, राम-नाम, राम-धुन, निर्मल-नाद या दिव्य-ध्वनि कह कर याद किया है, गुरु नानक साहिब ने आम तौर पर उसे शब्द या नाम कह कर याद किया है। आप इसे गुरु की बानी, धुर की बानी, सच्ची बानी भी कहते हैं; इसी को हुकम, अकथ-कथा, हरि-कीर्तन भी कहते हैं। मुसलमान फ़कीरों ने उसी रूहानियत को कलमा, बाँगे-आसमानी, कलामे-इलाही, निदाए-सुलतानी कह कर याद किया है। हज़रत ईसा ने उसी रूहानियत को वर्ड या लोगास कह कर वर्णन किया है। चीन के महात्मा ने उसी को टाओ कह कर पुकारा है। हमारा लफ़्ज़ों से कोई वाद-विवाद नहीं है। हमें तो उस रूहानियत की, उस शब्द या नाम की खोज करना है।

यहाँ गुरु रामदासजी हमें समझाते हैं कि हम सब दुनिया के जीव इस संसार में सुख प्राप्त करने की कोशिश करते हैं, शान्ति प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। कोई बेटे-बेटियों के प्यार में सुख ढूंढता है, कोई कौमों, मज़हबों, मुल्कों की मान-बड़ाई में सुख ढूंढता है, कोई शराब-कबाब में तो कोई दुनिया के धन्धों में सुख की तलाश करता है। इन चीज़ों में न आज तक किसी को सुख मिला है, न कभी मिल ही सकता है, क्योंकि इन चीज़ों में हम सुख ढूंढने की कोशिश कर रहे हैं वे सब अस्थायी या आरज़ी हैं अतएव इनका सुख भी अस्थायी या आरज़ी ही हो सकता है। ये जो भी सुख हमें दिखाई दे रहे हैं, ये सभी समय पा कर दुःखों में बदलना शुरू हो जाते हैं। इसीलिए महात्मा समझाते हैं कि जब तक हमें वह वस्तु न मिले जो कभी नष्ट न हो, कभी फ़नाह न हो, हम उसे

अपना न बना लें, तब तक हम सुख कैसे हासिल कर सकते हैं, शान्ति किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं,। वह कौन-सी वस्तु है? गुरु साहिब कहते हैं, 'नाम मिलै मन तृपतीऐ' कि जब वह अमृतमय नाम हमारे मन को मिल जाता है तो हमारे मन में तृप्ति आ जाती है. शान्ति आ जाती है। फिर फ़रमाते हैं, 'बिनु नामै धृग जीवासु' कि अगर देह में बैठ कर हमने उस नाम के स्वाद को प्राप्त नहीं किया, अपने अन्तर में उस अमृत को प्राप्त नहीं किया तो हमारे इस देह में आने को ही धिक्कार है। हमारे मनुष्य देह में आने का जो ध्येय और मक्सद है, वह नाम का स्वाद पाये बगैर कभी पूरा नहीं हो सकता। इसलिये गुरु साहिब उस शब्द और नाम की महिमा कहते हैं।

महात्मा लफ़्ज़ों को शब्द या नाम नहीं कहते। हमने अपने-अपने प्यार में आकर परमात्मा के जो नाम रखे हैं उन लफ़्ज़ों को महात्मा नाम या शब्द नहीं कहते। ये वर्णात्मक नाम हैं, वर्णात्मक शब्द हैं। ये हमारे लिखने, पढ़ने और बोलने में आते हैं। हमारे कई देश हैं, हर देश की अपनी-अपनी अनेक भाषाएँ हैं और एक-एक भाषा में अनेक लफ़्ज़ों के द्वारा हम दिन-रात उस परमात्मा को याद कर रहे हैं । कोई रब्ब, कोई अल्लाह, कोई करीम, कोई रहीम, कोई परमात्मा तो कोई परमेश्वर कहता है। ये जितने भी लफ़्ज़ों से हम परमात्मा को याद कर रहे हैं ये सब लिखने, पढ़ने और बोलने में आते हैं। आप देखें, हज़ारों अनेकों महात्मा दुनिया में आये हैं और आगे भी अनेक महात्माओं को दुनिया में आना है। हज़ारों अनेकों लफ़्ज़ों से महात्माओं ने उस परमात्मा को याद किया है और अन्य अनेकों नामों के द्वारा महात्मा भविष्य में भी उस परमात्मा को याद करेंगे। पिछले लफ़्ज़ या नाम हम भूलते जा रहे हैं और आगे के लिए प्यार में आकर हम उस परमात्मा के और नये नाम रख रहे हैं। ये सभी लफ़्ज़ या नाम जो लिखने, पढ़नें और बोलने में आते हैं वर्णात्मक नाम या वर्णात्मक शब्द हैं। हम हर लफ़्ज़ के इतिहास का पता लगा सकते हैं, इनके प्रारम्भ होने

का समय निश्चित कर सकते हैं। स्वामीजी महाराज को आये सौ वर्ष हुए हैं; उनके जाने के बाद से हमने उस मालिक को राधास्वामी कहना शुरू कर दिया है। परन्तु हम कभी यह सोचने की कोशिश नहीं करते कि दुनिया के जीव स्वामीजी के आने से पहले भी किसी न किसी नाम के द्वारा उस मालिक को, उस परमात्मा को याद किया ही करते थे। दुनिया को बने हुए तो करोड़ों युग बीत गये हैं। मालिक भी यहीं है और हम हमेशा मालिक को याद करते आये हैं। इसी प्रकार गुरु नानक साहिब को आये पाँच सौ वर्ष हुए हैं। उनसे पहले भी हम मालिक को किसी न किसी नाम से याद करते ही थे। मुहम्मद साहिब को आये हुए चौदह सौ वर्ष हुए हैं, रामचन्द्रजी महाराज को आये इससे भी ज्यादा समय हुआ है। परन्तु दुनिया को बने हुए तो कई युग बीत चुके हैं। वह परमात्मा भी यहीं था और हम दुनिया के जीव भी यहीं थे और किसी न किसी लफ़्ज़ के द्वारा परमात्मा को याद करते ही आये हैं। ये परमात्मा के जितने भी नाम हैं जो लिखने, पढ़ने या बोलने में आते हैं, महात्मा इन्हें वर्णात्मक नाम कहते हैं। हम इनके इतिहास और समय का पता लगा सकते हैं। परन्तु हरएक महात्मा उस सच्चे शब्द की महिमा करता है, उस सच्चे नाम की महिमा करता है जो न कभी आँखों के द्वारा देखा जा सकता है, न कभी ज़बान के द्वारा बोला जा सकता है, न कानों से सुना जा सकता है। हज़रत ईसा समझाते हैं, 'आँखें होने के बावजूद तू उसे देख नहीं सकता, कान होते हुए भी तू उसे सुन नहीं सकता'। हुज़ूर महाराजजी (बाबा सावनसिंहजी महाराज) उसका 'अलिखित कानून' और 'अनबोली भाषा' कह कर वर्णन करते थे। वह सच्चा नाम या शब्द ऐसा कुदरती कानून है जो कभी लिखने, पढ़ने या बोलने में नहीं आता। गुरु नानक साहिब समझाते हैं :—

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥

नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ।।

(आदि ग्रन्थ, १३९)

कि तुम उस शब्द और नाम को पकड़ कर अपने ख़सम या परमात्मा से मिल सकते हो जिसे न किसी की आँखें देखती हैं, न किसी के कान सुनते हैं, न ज़बान जिसका वर्णन कर सकती है; जहाँ न किसी के हाथ-पैर लेकर पहुँचते हैं और जिस चीज़ को हम जीते-जी मर कर ही प्राप्त कर सकते हैं। जीते-जी मरने से तात्पर्य यह है कि जिस वस्तु को हम नौ द्वारों में से ख़याल को निकाल कर, आँखों के पीछे इकट्ठा करके ही प्राप्त कर सकते हैं। सभी महात्मा उस शब्द और नाम की महिमा करते हैं। ये जितने भी हमारे लफ़्ज़ हैं, ये हमारे ज़रीया या साधन हैं, वह (शब्द या नाम) हमारा ध्येय और लक्ष्य है। हमें लफ़्ज़ों के साथ प्यार करके कभी भी कौमों, मज़हबों, मुल्कों के झगड़े खड़े नहीं करने चाहियें। हमें तो इन लफ़्ज़ों के ज़रीये उस सच्चे शब्द की, उस सच्चे नाम की खोज करना है। उस शब्द ने दुनिया की रचना पैदा की, उसके आधार पर हमारे खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं :

सबदे धरती सबदि आकास। सबदे सबदि भया परगास ।।
सगली सृसटि सबद के पाछे। नानक सबद घटे घट आछे ।।

कि उस शब्द ने धरती पैदा की है, सूर्य-चन्द्र पैदा किये हैं, उस शब्द ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की है। वह शब्द दिन-रात सबके अन्तर में धुनकारें दे रहा है। जब तक हम उस शब्द के साथ ख़याल नहीं जोड़ते, तब तक हमारा जन्म-मरण के दुःखों से कभी किसी हालत में छुटकारा नहीं हो सकता। यही हमें वेदों-शास्त्रों में ऋषि-मुनि समझाते चले आ रहे हैं कि परमात्मा ने आकाशवाणी के द्वारा सृष्टि की रचना की है। मुसलमान फ़क़ीर समझाते हैं कि परमात्मा ने कलमे के ज़रीये दुनिया की रचना पैदा की है। ईसा मसीह बाइबिल में फ़रमाते हैं कि उस परमात्मा ने 'वर्ड' के द्वारा दुनिया की रचना की है। किसी ने 'वर्ड' कह दिया, किसी ने 'कलमा' कह दिया, किसी ने 'कुन' कह दिया, किसी ने शब्द और

नाम कह दिया, किसी ने आकाशवाणी कह दिया। हमें लफ़्ज़ों के विवाद में नहीं उलझना है। हमें तो उस वस्तु की खोज करना है जिसके आधार हमारे खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं, जो वस्तु दिन-रात हमारे अन्दर धुनकारें दे रही है और जिसको प्राप्त करके ही हम जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा प्राप्त कर सकते हैं। गुरु साहिब फ़रमाते हैं :

सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ॥ (आदि ग्रन्थ, १२४)

जो व्यक्ति देह और शरीर के बाहर उस नाम रूपी वस्तु को ढूंढने में लगे हुए हैं, वे तो बेगारियों की तरह अपना कीमती समय नष्ट कर रहे हैं। बेगारी कौन होता है? जो सारा दिन मेहनत करता है, टूट-टूट कर मरता, खून-पसीना भी एक कर देता है पर जिस गरीब के हाथ या पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। अगर कोई चीज़ हमारे घर के अन्दर है तो घर के अन्दर जाकर उसकी खोज करेंगे तभी हम उस चीज़ को पा सकेंगे। अगर हम बाहर सड़कों पर जाकर या बाज़ारों-गलियों में खोज करेंगे तो हम उस वस्तु को किस प्रकार प्राप्त कर सकेंगे? गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं, 'घर रतन लाल बहु माणक लादे, मन भ्रमिआ लहि न सकाइऐ' कि हमारे घर अर्थात् शरीर के अन्दर मालिक ने अनगिनत वस्तुएँ रखी हैं, पर हम बाहरमुखी हुए बैठे हैं। हमारा मन इन भ्रमों, कर्मकाण्डों में से निकलता ही नहीं। जब तक शरीर के अन्दर जाकर खोज नहीं करेंगे, तब तक हम उन वस्तुओं को प्राप्त कैसे कर सकते हैं। जो कुछ हमें मिलेगा, अपने शरीर के अन्दर ही मिलेगा, देह के अन्दर ही मिलेगा। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं, 'गुरमुखि होवै सु काइआ खोजे होर सभ भरमि भुलाही' कि जो गुरुमुख लोग हैं, मालिक के भक्त और प्यारे हैं वे हमेशा शरीर और देह के अन्दर जाकर उस परमात्मा की खोज करते हैं। बाक़ी सब दुनिया के जीव भ्रमों में फँस कर यहीं भूले फिरते हैं।

हमारा रूहानी सफ़र पैरों के तलुओं से लेकर सिर की चोटी

तक है। इस सफ़र की दो मंज़िलें हैं; एक आँखों तक और दूसरी आँखों से ऊपर। हमारे शरीर में जो आत्मा और मन का केन्द्र या बैठक है वह आँखों के पीछे है, जिसे कोई तीसरा तिल, कोई शिव-नेत्र, कोई दिव्य चक्षु, कोई घर-दर, कोई मुक्ति का दरवाज़ा कह कर याद करता है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं :

मनु खिनु खिनु भरमि भरमि बहु धावै,
तिलु घरि नही बासा पाईऐ ।। (आदि ग्रन्थ, ११७९)

हमारा मन आँखों के पीछे तीसरे तिल से उतर कर मिनिट-मिनिट, सेकिण्ड-सेकिण्ड बाहर इन भ्रमों की ओर भागने की कोशिश करता है। यह क्षण-मात्र के लिये भी आँखों के पीछे नहीं टिकता। जब तक यह आँखों के पीछे नहीं टिकता हमारा मन ब्रह्म, त्रिकुटी अपने ठिकाने पर किस तरह पहुँच सकता है। यह कौन से भ्रमों के पीछे भागता है? यह जो कुछ भी हम आँखों के द्वारा दुनिया में देख रहे हैं इसका महात्माओं ने भ्रम कह कर वर्णन किया है क्योंकि इसे नष्ट और फ़नाह हो जाना है। हम इसे असल समझ कर दिन-रात अपना बनाने में लगे हुए हैं। महात्मा समझाते हैं कि ये दुनिया के पदार्थ और शक्लें न तो कभी किसी के बने हैं और न ही कभी किसी के बन सकते हैं। हम अपने ख़याल को आँखों से नीचे उतार कर बाहर भ्रमों में फैलाये बैठे हैं। जब तक हमारा ख़याल वापस आँखों के पीछे नहीं आता, यह मन कभी वापस अपने घर नहीं जा सकता। आप देखें कि अगर आप कोई बात भूल जायें और याद करना चाहें तो आपका हाथ अपने आप ही आंखों के ऊपर मस्तक पर पहुँच जाता है। कभी किसी भूली हुई चीज़ को याद करने के लिये हम पैरों या बाहों पर हाथ नहीं मारते। भौहों के बीच के इस स्थान का हमारे सोच-विचार करने के साथ बड़ा गहरा सम्बन्ध है। हरएक व्यक्ति का ख़याल आँखों के पीछे से उतर कर शरीर के नौ द्वारों के ज़रीये सारी दुनिया में फैला हुआ है। यहाँ बैठे हुए कभी बच्चों की याद आती है, कभी घर के किसी कारोबार की याद आती है, कभी मन दुकान के ग्राहकों के बारे में सोचता

है। मन कभी निश्चल या स्थिर नहीं बैठता। यह जो सारा दिन हमें सोचने की आदत पड़ी हुई है, मन के द्वारा दलीलें करने की आदत पड़ी हुई है, इसे महात्माओं ने सुमिरन कहा है। आप देखें, हमें सुमिरन करने की स्वाभाविक रूप से आदत पड़ी हुई है। चाहे जितनी अँधेरी कोठरियों में ताले लगाकर अपने आपको बन्द कर लें, आपका मन कभी वहाँ नहीं होगा, सारी दुनिया में फैला होगा।

जिसका हम सुमिरन करते हैं उसकी शक्ल भी हमारी आँखों के सामने आकर खड़ी हो जाती है। इसको महात्मा ध्यान करना कहते हैं। बाल-बच्चों का सुमिरन करते हैं तो इनकी शक्लें आँखों के आगे आ जाती हैं। घर के कारोबार का सुमिरन करते हैं तो घर के कारोबार आँखों के आगे आकर फिरना शुरू हो जाते हैं। जिनका हम सुमिरन और ध्यान करते हैं उनके साथ धीरे-धीरे हमारा मोह और प्यार होना शुरू हो जाता है। इन शक्लों के साथ इतना लगाव और प्यार पैदा कर लेते हैं कि रात को हमें सपने भी इन्हीं के आने लगते हैं और मौत के समय इनकी शक्लें सिनेमा के चलचित्रों की तरह हमारी आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती हैं। और 'जहाँ आसा तहाँ बासा', जिधर हमारा आखिरी समय ख़याल होता है हम दुनिया के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं। यह बाल-बच्चों का प्यार है, कौमों, मज़हबों, मुल्कों के झगड़ों का प्यार है जो हरएक को बार-बार देह के बन्धनों की ओर खींच कर ले आता है। महात्मा समझाते हैं कि हमें इसी तरीके अथवा विधि के द्वारा अपने मन और अपने ख़याल को दुनिया के मोह और प्यार में से निकालना है। सुमिरन और ध्यान की तो हमें स्वाभाविक आदत पड़ी हुई है। सो महात्मा समझाते हैं कि तुम इस सुमिरन और ध्यान की आदत से फायदा उठाओ। अभी हम किसका सुमिरन और ध्यान करते हैं? जिन चीज़ों को नष्ट और फ़नाह हो जाना है। महात्मा कहते हैं कि उस चीज़ का सुमिरन करो जो नष्ट नहीं होगी, कभी फ़नाह नहीं होगी। जब सारी दुनिया में दृष्टि डाल कर देखते हैं तो केवल एक परमात्मा, परमेश्वर, अकाल पुरुष, वाहिगुरु

हो है जो अमर अविनाशी है। उसके सिवाय और सब-कुछ नाशवान है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु' कि भाई ! उस मालिक के अतिरिक्त और सब-कुछ मैल है, नाशवान है। इसी प्रकार आसा की वार में गुरु नानक साहिब लिखते हैं :

कूड़ि कूड़ै नेहु लगा, विसरिआ करतारु ।।
किसु नालि कीचै दोसती, सभु जगु चलणहारु ।। (आ. ग्र., ४६८)

हमारा यह शरीर भी कूड़ (मिथ्या और नाशवान) है। इस शरीर में बैठ कर जिस दुनिया के साथ हम मोह और प्यार किये बैठे हैं वह भी कूड़ है। यह कूड़ उस कूड़ के मोह व प्यार में उलझा बैठा है और 'विसरिया करतार' परमात्मा को भूले बैठा है। आप फ़रमाते हैं कि उस परमात्मा के अलावा कोई चीज़ हमारी दोस्ती और भक्ति के योग्य नहीं है, हम यों ही अपने ख़याल को सारी दुनिया में फैलाये बैठे हैं। सो महात्मा हमें उस मालिक के नाम का सुमिरन करने का तरीका बताते हैं। हमें मालिक के नाम का सुमिरन करके अपने फैले हुए ख़याल को वापस समेट कर आँखों के पीछे एकत्रित करना है।

जब हमारा ध्यान आँखों के पीछे इकट्ठा होना शुरू हो जाता है तो हमें अपने आप ही समझ आ जाती है कि वह मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़, जो कि मालिक की दरगाह से आ रही है, हरएक के अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रही है। वह आवाज़ चोरों-ठगों के अन्दर भी है, साधू-सन्तों-महात्माओं के अन्दर भी है। उस आवाज़ को किसी ने शब्द कह कर वर्णन किया है, किसी ने नाम कह कर वर्णन किया है। जब हमारा मन उस शब्द या नाम का स्वाद लेने लग जाता है तो उसका स्वाद इतना मीठा और निर्मल होता है कि उस स्वाद को प्राप्त करके हमारा मन वापस अपने ठिकाने—ब्रह्म या त्रिकुटी—पर पहुँच जाता है और हमारी आत्मा उसके पंजे से आज़ाद हो जाती है, हमारे मन और आत्मा की गांठ खुल जाती है, हम अपने आपको पहचानने के योग्य हो जाते हैं, उस परमात्मा को पहचानने के योग्य बन जाते हैं। सो

गुरु साहिब समझाते हैं कि जब भी तुम्हारे मन में तृप्ति और शान्ति आयेगी, उस अमृत-रूपी नाम को पीकर ही आयेगी। जब तक इस शरीर के अन्दर जाकर उस शब्द की खोज नहीं करते, उस नाम रूपी अमृत की तलाश नहीं करते, हमारा जन्म-मरण के दुखों से छुटकारा पाने का कभी सवाल ही पैदा नहीं होता। यह मनुष्य का चोला परमात्मा ने अपनी भक्ति के लिये बख़्शा है, अपने प्यार के लिये बख़्शा है। यह जो कुछ भी हम आँखों से देख रहे हैं, यह चौरासी का एक बहुत बड़ा जेलखाना है। इस जेलखाने में से निकलने का परमात्मा ने केवल एक दरवाज़ा रखा है। वह कौन-सा दरवाज़ा है? वह मनुष्य का चोला है। चौरासी लाख जिया-जून भोगने के बाद परमात्मा ने हमें यह मौक़ा बख़्शा है ताकि हम इसका फ़ायदा उठा कर मालिक की भक्ति करके हमेशा के लिये देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर लें। गुरु साहिब फ़रमाते हैं:

काइआ नगरु नगरु है नीको विचि सउदा हरिरसु कीजै ॥

(आदि ग्रन्थ, १३२३)

हमारी देह एक बहुत सुन्दर शहर है क्योंकि इसके अन्दर बैठ कर हम हरि रूपी सौदा खरीद सकते हैं, मालिक की भक्ति कर सकते हैं। बाकी सौदे तो हम हमेशा खरीदते आये हैं। अगर कोई अनोखी वस्तु है जिसे हम मनुष्य के चोले में बैठ कर खरीद सकते हैं तो वह केवल परमात्मा की भक्ति है, परमात्मा का प्यार और उसका मिलाप है। इसलिये महात्मा हमें बार-बार यही उपदेश देते हैं कि इस इन्सान के जामे में आकर हमें उस मंज़िले-मक्सूद को आँखों के आगे रखना है, उस धुरधाम की खोज करनी है, अपने अन्दर उस लक्ष्य या ध्येय को प्राप्त करने की कोशिश करनी है। पता नहीं फिर इन्सान का जामा मिले-मिले, न-मिले न-मिले, किसी ऐसी जगह जाकर जन्म हो जाये जहां भूले-भटके भी हमारा ख़याल मालिक की भक्ति की ओर न जा सके। कबीर साहिब फ़रमाते हैं:

कबीर मानस जनम दुलंभ है, होइ न बारं बार ॥

जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि, बहुरि न लागहि डार ।।

कबीर साहिब समझाते हैं कि यह न सोचो कि मनुष्य का जामा हमेशा मिलता रहेगा। जिस प्रकार फल पक कर ज़मीन पर गिर जाता है और चाहे जितनी कोशिश करें वह कभी भी वापस पेड़ से नहीं जुड़ सकता, इसी प्रकार अगर तुम भी एक बार इस मौके को हाथ से खो बैठोगे तो यह मौका भी बार-बार नहीं मिलेगा। इसलिये गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'बिनु नामै धृगु जीवासु'; अगर देह में बैठकर हमारा मन सच्चे शब्द की कमाई की ओर नहीं जाता, नाम की कमाई की ओर नहीं जाता तो हमारा देह में आने का उद्देश्य और ध्येय कभी पूरा नहीं हो सकता।

हम शरीर के अन्दर जाकर उस नाम की तलाश करने की कोशिश नहीं करते। हम नाम को ग्रन्थों-पोथियों में ढूंढते हैं, मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में ढूंढते हैं, जंगलों-पहाड़ों में ढूंढने की कोशिश करते हैं। जो वस्तु हमारे शरीर के अन्दर है, यदि हम शरीर के अन्दर ढूंढेंगे तो उसे प्राप्त कर सकेंगे। परन्तु हम तो हमेशा बाहरमुखी हुए रहते है। ग्रन्थों-पोथियों में महात्मा उस शब्द की खोज और कमाई की महिमा लिख देते हैं, उसे प्राप्त करने के तरीके और साधन का ज़िक्र कर देते हैं, परन्तु वह वस्तु तो हमें कभी बाहर से नहीं मिलेगी। जिस वस्तु की महात्मा महिमा लिख रहे हैं वह शब्द और नाम तो हमारे शरीर के अन्दर है। इसी प्रकार हम सत्संग में शब्द और नाम की महिमा कर रहे हैं, उस नाम के बारे में विचार कर रहे हैं। परन्तु सत्संग सुनने से ख़याल नाम या शब्द के साथ नहीं जुड़ता। जो कुछ सुन रहे हैं उस पर अमल करने से ही हमारा ख़याल शब्द और नाम के साथ जुड़ सकता है। इसी तरह मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों के अन्दर महात्मा उस शब्द की महिमा करते हैं, उसका कीर्तन करते हैं। परन्तु इस कीर्तन को सुनकर तो आप शब्द का स्वाद प्राप्त नहीं कर सकते। जिस चीज़ का कीर्तन किया जा रहा है, उस चीज़ को शरीर के अन्दर ढूंढ कर ही हमारे

मन में तृप्ति और शान्ति आ सकती है। अगर हम सारा दिन खाना बनानें की पुस्तक को ही पढ़ते रहें तो न तो कभी हमें खाने का स्वाद आ सकता है और न ही पेट भर सकता है। यदि हम पुस्तक के अनुसार खाना बना लें तो हमारा पेट भी भर जाता है और हमें स्वाद भी आ जाता हैं। सो महात्मा समझाते हैं कि यों ही अपने ख़याल को बाहर फैलने नहीं देना चाहिये। जो कुछ भी हमें मिलेगा अपनें शरीर के अन्दर मिलेगा, अपनी देह और वजूद में मिलेगा।

गुरुमुख अथवा सतगुरु हमें विधि और साधन बताते हैं कि किस प्रकार हमें शरीर के अन्दर जाकर खोज करना है। गुरुमुख हमारे अन्दर घोल कर कुछ नहीं डालते। वह दौलत परमात्मा ने हमारे अन्दर हमारे लिये ही रखी है। परन्तु उस दौलत को हमें अपनें शरीर के अन्दर किस प्रकार ढूंढना है? इसकी विधि इसका भेद हमें गुरुमुखों से प्राप्त होता है। गुरु साहिब बहुत सुन्दर दृष्टान्त देते हैं :

कासट महि जिउ है बैसंतरु मथि संजमि काढि कढीजै ॥
राम नामु है जोति सबाई ततु गुरमति काढि लईजै ॥

(आदि ग्रन्थ, १३२३)

जिस प्रकार लकड़ी के अन्दर अग्नि होती है परन्तु यह अग्नि न किसी को दिखाई देती है और न ही कोई इससे फायदा उठा सकता है। पर जब लकड़ी से लकड़ी रगड़ना शुरू कर देते हैं तो उसमें से अग्नि भी उत्पन्न हो जाती है और हम उस अग्नि से फायदा भी प्राप्त कर लेते हैं। गुरु साहिब समझाते हैं कि इसी प्रकार वह शब्द और नाम हम सबके अन्दर है, पर जब तक हमें युक्ति और तरीके का ही पता नहीं लगता कि किस तरह अपने अन्दर जाकर खोज करनी है, हम उस नाम से फायदा कैसे उठा सकते हैं। इसलिये गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं, 'कोई गुरमुखि सजणु जे मिलै' कि यदि हमें कोई मालिक का भक्त और प्यारा मिल जाये, वह तरीका और साधन बता दे कि किस तरह उस हरि के गुण गाने हैं, किस तरह उस शब्द और नाम के साथ ख़याल को

जोड़ना है और हम उन गुरुमुखों के बताये हुए मार्ग पर चलना शुरू कर दें तो हम उस हरि के गुण गाने के योग्य हो जाते हैं, अपने ख़याल को शब्द के साथ जोड़ लेते हैं, नाम के साथ जोड़ लेते हैं। हुज़ूर महाराजजी समझाया करते थे कि विद्या की ताकत हम सबके अन्दर मौजूद होती है, पर यह ताकत हमारे अन्दर सोई हुई रहती है। जब तक हम स्कूलों-कॉलेजों में जाते हैं, शिक्षकों के आदेशों का पालन करते हैं, रात को जागते हैं, मेहनत करते हैं तो यह सोई हुई ताकत हमारे अन्दर जाग पड़ती है, हम बी. ए., एम. ए. गुणी ज्ञानी बन जाते हैं। आप देखें, जिनके पास वकालत या डाक्टरी की डिग्री है, उनके अन्दर शिक्षकों ने कोई वस्तु घोल कर नहीं डाली है, सिर्फ शिक्षकों की संगति के द्वारा उनकी बुद्धि इतनी तीव्र हो जाती है कि वे डाक्टर या वकील बन जाते हैं। जो लोग कभी शिक्षकों की संगति ही नहीं करते और स्कूलों-कॉलेजों से भाग आते हैं, विद्या की ताकत तो उनके अन्दर भी मौजूद होती है, पर वह सुप्त आती है और सुप्त ही चली जाती है। अतएव गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं हमें गुरुमुखों के पास जाकर भेद और तरीका लेना है। उन्हें तो सिर्फ इशारा ही करना है, युक्ति ही बतानी है। जिस चीज़ को हमें प्राप्त करना है वह उन्हें अपने पास से नहीं देनी है। वह तो परमात्मा ने पहले से हमारे लिये हमारे अन्दर रखी हुई है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं :

जिसका गृहु तिनि दीआ ताला, कुंजी गुर सउपाई ॥

(आदि ग्रन्थ, २०५)

कि भाई ! जिस परमात्मा ने तुझे पैदा किया है, उसने यह नाम का खजाना तेरे अन्दर रख कर उसका भेद गुरुमुखों के हवाले कर दिया है। हमें आंखों के पीछे पर्दा लगा कर बाहर निकाल दिया गया है। आप देखें कि अगर आप खुद को मकान के अन्दर बन्द करके बाहर ताला लगा दें, तो बाहर से कोई कैसे आपके मकान के अन्दर आ सकता है। जब तक कोई चाबी वाला ताला नहीं खोलता, बाहर से कोई मनुष्य मकान के अन्दर पहुँच ही नहीं

सकता। इसी प्रकार परमात्मा हमारे अन्दर बैठा हुआ है, परन्तु हमें आंखों के पीछे परदा लगा कर बाहर निकाला हुआ है। जब हम किसी चाबीवाले गुरुमुख की संगति करते हैं तो वे हमें तरीका और साधन बता देते हैं कि किस तरह हमें इस ताले को खोलना है, किस तरह दरवाज़े के अन्दर जाना है; फिर हम अपने इस घर के अन्दर ही परमात्मा को पा लेते हैं। गुरु नानक साहिब उपदेश देते हैं कि हमें उन गुरुमुखों की संगति करना है, उन सन्तों-महात्माओं की संगति करना है जो हमारे ख़याल को अन्तर में शब्द और नाम के साथ जोड़ दें।

हउ तिस विटहु चउखंनीऐ मै नामु करे परगासु॥

फ़रमाते हैं कि मैं अपने सतगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, क़ुर्बान जाता हूँ, अपने आपको न्योछावर करता हूँ, जिन्होंने मेरे ख़याल को उस शब्द और नाम के साथ जोड़ कर मेरे अन्दर से अज्ञानता के अन्धकार को दूर कर दिया, मेरे अन्दर नाम की रोशनी पैदा कर दी, नाम का प्रकाश कर दिया। जब हम आँखें बन्द करते हैं तो हमें अपने अन्दर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई देता है, परन्तु जब हम अपने ख़याल को उस शब्द और नाम के साथ जोड़ लेते हैं तो हमारी निरत खुल जाती है जो कि अन्तर में शब्द का प्रकाश देखना शुरू कर देती है, अन्तर में उस रोशनी को प्राप्त करना शुरू कर देती है। हर महात्मा ने उस प्रकाश का ज़िक्र किया है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं:

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ,
अंतरि चानणु अगआनु अंधेरु गवाइआ॥ (आदि ग्रन्थ, १२४)

जब हम गुरुमुखों के उपदेश पर चल कर सच अथवा शब्द रूपी सुरमा अपनी आँखों में लगाने लगते हैं तो हमारी आँखों के आगे से अज्ञानता का अँधेरा दूर हो जाता है, परमात्मा का नूर और प्रकाश आना शुरू हो जाता है। हिन्दुस्तान में यह आम रिवाज है कि अगर किसी की आँखें कमज़ोर हो जाती हैं, दिखाई नहीं देता या कम दिखाई देने लगता है तो उसे सुरमा लगाने की हिदायत दी

जाती है। हमारा ख़याल है कि सुरमा लगाने से आँखें वापस ठीक हो जाती हैं। इसी प्रकार गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं कि जो हम दुनिया के जीव आँखों वाले होने के कारण उस परमात्मा के नूर और प्रकाश को अपने अन्दर नहीं देख सकते, हमें अपने अन्दर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई देता है, जब हम गुरुमुखों के आदेश के अनुसार अपनी आँखों में नाम या शब्द का सुरमा डालते हैं तो हमारी आँखों के आगे से अज्ञानता का अन्धकार दूर हो जाता है, उस परमात्मा का नूर और प्रकाश हमारे अन्दर प्रकट होना शुरू हो जाता है। फिर क्या होता है? 'जोती जोति मिली मन मानिआ हरि दरि सोभा पावणिआ' कि उस ज्योति के दर्शन करके हमारा मन मान जाता है। अभी हमारा मन बाहरमुखी हुआ बैठा है, आँखों के पीछे से उतर कर इन्द्रियों के भोगों की ओर फैला हुआ है। जब यह मान जाता है तो आँखों के पीछे आकर अपने घर की तरफ़ जाना शुरू कर देता है, अपने केन्द्र अथवा ठिकाने की ओर आना शुरू कर देता है। जब मन मान जाता है अर्थात् जब मन अपने ठिकाने ब्रह्म या त्रिकुटी में पहुँच जाता है, फिर हमारी ज्योति ज्योत में मिल जाती है; हमारी आत्मा वापस जाकर परमात्मा में समा जाती है। फिर फ़रमाते हैं, 'हरि दरि सोभा पावणिआ' कि हम हरि अथवा मालिक की दरगाह में जाकर हमेशा के लिये शोभा और इज़्ज़त प्राप्त कर लेते हैं। सो जब तक हमारे अन्दर से यह अज्ञानता का अँधेरा दूर नहीं होता, हमारे मन और आत्मा की गाँठ कभी भी नहीं खुल सकती, हम कभी भी मालिक की दरगाह में जाकर शोभा और इज़्ज़त प्राप्त नहीं कर सकते। गुरु साहिब फ़रमाते हैं :

बिनु सबदै अंतरि आन्हेरा ॥
न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ (आदि ग्रन्थ, १२४)

कहते हैं कि भाई, शब्द और नाम की कमाई के बिना न कभी तेरे अन्दर से अज्ञानता का अन्धकार दूर होगा, न कभी रोशनी और प्रकाश दिखाई देगा, न कभी तेरा देह के बन्धनों से छुटकारा होगा, न तू जन्म-मरण के दुःखों से बच सकेगा और न कभी परमात्मा को

प्राप्त कर सकेगा। हमें जो कुछ भी प्राप्त होगा, शब्द के अभ्यास से प्राप्त होगा। हमारी आत्मा की जो देखने की शक्ति है इसे महात्मा निरत कहते हैं। जो इसकी सुनने की शक्ति है उसे सुरत कहते हैं। सुरत को अन्तर में उस शब्द की आवाज़ को पकड़ना है, निरत को उस प्रकाश को देखना है। सो गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि मैं अपने सतगुरु पर बलिहारी जाता हूँ, कुर्बान जाता हूँ, जिन्होंने मेरी सुरत को उस शब्द के साथ जोड़ दिया है और जहाँ जाकर मैंने उस शब्द या नाम के प्रकाश को देखना शुरू कर दिया है।

मेरे प्रीतमा हउ जीवा नामु धिआइ ।।
बिनु नावै जीवणु ना थीऐ मेरे सतिगुर नामु दृड़ाइ ।।

गुरु साहिब मालिक के आगे अरदास करते हैं, विनती करते हैं कि हे परमात्मा! अकाल पुरुष परमेश्वर! तेरा नाम मेरे जीवन का आधार है, मैं तेरे नाम की कमाई करके जीना चाहता हूँ; मैं स्वाँस-स्वाँस तेरे नाम की भक्ति करना चाहता हूँ; उठते-बैठते, चलते-फिरते मैं अपने ख़याल को उस शब्द और नाम के साथ जोड़ कर रखना चाहता हूँ। अगर हम देह में बैठ कर अपने मन को उस शब्द और नाम के अभ्यास में नहीं लगायेंगे तो हमारा जीवन ही धृग है, हमारे जीने का कोई फायदा ही नहीं हो सकता। बाल-बच्चे तो हमें पिछले जन्मों में भी मिलते आये हैं; खाना-पीना, ऐशो-इशरत हम हमेशा करते आये हैं। यदि कोई अनोखी वस्तु है जो हम कभी पहले प्राप्त न कर सके और अब प्राप्त कर सकते हैं तो, गुरु साहिब फ़रमाते हैं, वह केवल शब्द और नाम की कमाई है। इसलिये आप कहते हैं कि हे मालिक! इस ऊँची और पवित्र दौलत को प्राप्त करके ही हम तुझ तक पहुँच सकते हैं। हम तो यही चाहते हैं कि तू हमें जिस हालत में भी रखे हम उसी हालत में रहते हुए अपने ख़याल को शब्द और नाम के साथ जोड़ कर रखें। अगर दुःखों का सामना करना पड़े तो भी हमें शब्द की कमाई करनी है। अगर तू हमें इस संसार में सुख देता है तो हमें नाम की कमाई करनी है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं:

जौ राजु देहि त कवन वडाई ॥

जौ भीख मंगावहि त किआ घटि जाई ॥ (आदि ग्रन्थ, ५२५)

ऐ परमात्मा ! अगर तू मुझे दुनिया का राज-पाट भी दे दे, अगर सारी दुनिया की हुकूमत भी दे दे तो भी मुझे तो तेरी ही उपमा, तेरा ही गुण-गान करना है । अगर मुझे दर-दर की ठोकरें खानी पड़ जायें तो कौन-सा मुझे दाता का दर छोड़ देना है । जिस प्रकार समुद्र के जहाज़ के कौए को उस जहाज़ के सिवाय बैठने का और कोई ठिकाना ही नहीं मिलता, चाहे जितनी उड़ानें भर कर वह देख ले, समुद्र में उस जहाज़ के सिवाय उसे बैठने की और कोई जगह है ही नहीं । सो आप समझाते हैं कि उस परमात्मा के सिवाय हमारे लिये और कौन-सा स्थान या ठिकाना हो सकता है ! हम अहंकार और हौमैं में फँस कर जितना चाहें फड़फड़ा लें, आखिर हमें उस परमात्मा का ही आसरा लेना पड़ता है, अपने आपको उस मालिक के ही सुपुर्द करना पड़ता है। इसीलिये महात्मा हमें समझाते हैं हमें हमेशा मालिक के भाणे में रहना चाहिये । भाणे में रहने से तात्पर्य है कि जिस हालत में भी परमात्मा रखता है, उसी में रहते हुए हमें परमात्मा की भक्ति करना है । मन में कोई इच्छा नहीं करना है, कोई तृष्णा उत्पन्न नहीं करना है । परमात्मा की भक्ति केवल परमात्मा से मिलाप प्राप्त करने के लिये करना है; बाल-बच्चों के सुख के लिये, दुनिया की मान-बड़ाई के लिये या कौमों, मज़हबों व मुल्कों के झगड़े जीतने के लिये नहीं करना है । यह तो परमात्मा की भक्ति करने का कोई तरीका नहीं है । अगर हम भक्ति न भी करें तो भी जो कुछ परमात्मा ने हमारे भाग्य में लिखा है वह सब-कुछ उसे देना ही है। हमें तो भक्ति इसलिये करना है कि हमारे लेने-देने का हिसाब समाप्त हो जाये और हम वापस जाकर हमेशा के लिये परमात्मा में समा जायें । मालिक के भाणे में रह कर ही हम अपनी उद्देश्य-पूर्ति में सफल हो सकते हैं, क्योंकि अगर दुनिया की कामना और तृष्णा ही करते रहेंगे तो उन्हें पूरा करने के लिये परमात्मा हमें फिर जन्म दे देता

है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'देंदा दे, लैंदे थकि पाहि' कि भाई परमात्मा को देते-देते नहीं थकना है, तुझे ही लेते-लेते थक जाना है। जो कुछ भी तू परमात्मा से माँगता है उसे लेने के लिये परमात्मा तुझे फिर से जन्म दे देता है, और उस जगह उस जून में जन्म दे देता है जिसमें तू उन इच्छाओं और तृष्णाओं को अच्छी तरह पूरा कर सके। जब तक तू परमात्मा से परमात्मा को नहीं मांगेगा, तू उससे मिलने में कभी सफल नहीं हो सकेगा। हम रोज़ घरों में देखते हैं कि हम बच्चों को नौकरों के साथ बाहर खेलने के लिये भेज देते हैं। अगर बच्चा रोता है तो नौकर उसका हर तरह से दिल लगाने की कोशिश करता है, कभी उसे मिठाइयाँ खिलाता है, कभी कहानियाँ सुनाता है, कभी खिलौनों से खिलाता है। जब तक वह बच्चा खेल में लगा रहता है, माता-पिता भी निश्चिन्त हो अपने घर में बैठे रहते हैं। परन्तु जब बच्चा अपने ख़याल को हर तरफ़ से हटा कर अपने माता-पिता के लिये रोना शुरू कर देता है तो किसी भी माता-पिता से बरदाश्त नहीं होता, वे दौड़ कर बच्चे को हृदय से लगा लेते हैं। इसी प्रकार जब तक हम परमात्मा की रचना के स्वाद और प्यार में फँसे हुए हैं, हम रचना का ही हिस्सा बने हुए हैं। परन्तु जब हम रचना में से ख़याल निकाल कर रचना करने वाले की भक्ति और प्यार में लग जाते हैं तो उस परमात्मा से भी बरदाश्त नहीं होता, वह भी हम पर दया-मेहर व बख़्शिश करके हमें अपने साथ मिला लेता है।

महात्मा समझाते हैं कि हमें हमेशा मालिक के भाणे में, उसके हुक्म में रहना चाहिये। भाणे में रहने का मतलब अपने प्रारब्ध कर्मों का खुशी-खुशी हिसाब चुका देना है। ज़रा विचार करें कि ये कामनाएँ और तृष्णाएँ कौन करता है? हमारा मन करता है। हम उन्हें पूरी किससे करवाने की कोशिश करते हैं? परमात्मा से। हम कभी अपने मन को समझाने की कोशिश नहीं करते कि तू मालिक के हुक्म के अनुसार चलने की कोशिश कर, उलटा हम परमात्मा को समझाने की कोशिश में लगे हुए हैं, कि तू हमारे मन

की मरज़ी के मुताबिक चलने की कोशिश कर। भक्ति हम अपने मन की करने में लगे हुए हैं कि परमात्मा की? अगर मन की भक्ति कर रहे हैं तो मन के दायरे में ही बैठे रहेंगे। अगर परमात्मा की भक्ति करेंगे तो उस दयाल के दायरे में जा सकेंगे, वापस जा कर उस परमात्मा से मिल सकेंगे। सो गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'गुरमुख होवै सु पूजा जाणै भाणा मनि वसाई' कि मालिक के भक्तों और प्यारों को ही परमात्मा की भक्ति करने के तरीके और साधन का पता है। वे मालिक के भाणे में रह कर मालिक की भक्ति करते हैं अर्थात् जिस भी हालत में वह परमात्मा रखता है उसी में रहते हुए वे शब्द और नाम की कमाई करते हैं। इसलिये गुरु साहिब हमारी ओर से मालिक से प्रार्थना करते हैं कि हे मालिक! हम स्वाँस-स्वाँस तेरी भक्ति करना चाहते हैं, कदम-कदम पर तेरी भक्ति करना चाहते हैं, क्योंकि हमारे जीवन का, मनुष्य-जन्म को प्राप्त करने का उद्‌देश्य और ध्येय तभी पूरा हो सकता है जब हम उठते-बैठते, चलते-फिरते तेरे शब्द और नाम के अभ्यास में लग जायें।

नामु अमोलकु रतनु है पूरे सतिगुर पासि ॥
सतगुर सेवै लगिआ कढि रतनु देवै परगासि ॥

अब गुरु साहिब नाम की महिमा करते हैं। वह नाम जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं, कैसा है? आप फ़रमाते हैं कि नाम अनमोल रत्न है, वह अमूल्य है। सन्तों-महात्माओं ने आम तौर पर उसे रत्न, जवाहिर, हीरे आदि कह कर उसका वर्णन किया है, क्योंकि संसार में यदि हमारे लिये कोई कीमती से कीमती चीज़ है तो वह हीरे, जवाहिरात, रत्न ही हैं। परन्तु हम चाहे इनकी कितनी ही कीमत लगा लें, फिर भी ये चीज़ें मिट्टी ही हैं। इसलिये महात्मा नाम को अमूल्य और अनमोल कह कर वर्णन करते हैं, क्योंकि दुनिया की कोई भी दौलत, संसार की कोई भी सम्पदा, कभी उस नाम की कीमत अदा नहीं कर सकती। पर यह दौलत किनके पास है? आप फ़रमाते हैं, 'पूरे सतिगुर पासि'। जो मालिक के भक्त और प्यारे होते हैं वे नाम के भण्डारी बन कर आते हैं, वे

उस नाम रूपी खजाने के मालिक होते हैं। और वे भण्डारी उस भण्डार को किन्हें बख़्शते हैं ? फ़रमाते हैं, 'सतिगुर सेवै लगिआ' कि जो सतगुरु की सेवा में रहते हैं, उनके बताये हुए उपदेश पर चलते हैं, सतगुरु ऐसे सेवकों के आगे नाम का भण्डार खोल देते हैं, उन्हें नाम की दौलत बख़्श देते हैं। अतएव जब तक हम सतगुरु के पास जाकर, उनके चरणों में जाकर उनकी सेवा नहीं करते, उनके बताये हुए उपदेश पर नहीं चलते, हम उस भण्डारी से कोई भी चीज़ प्राप्त नहीं कर सकते।

सेवा का अर्थ सतगुरु के आदेश के अनुसार अपने जीवन को ढालना है, उनके समझाने के अनुसार अपनी सुरत या आत्मा को आँखों के पीछे लाना तथा उस शब्द और नाम के साथ जोड़ना है। यह सेवा चार प्रकार की है—तन, मन और धन की सेवा तथा सुरत-शब्द की सेवा। तन की सेवा का क्या लाभ है ? यह जो हमारे अन्दर इतना अहंकार भरा हुआ है, जब हम साध-संगत की सेवा करते हैं तो हमारे अन्दर से अहंकार निकलता है, हौमैं दूर होता है। हमारे मन में नम्रता और दीनता आती है। इसी प्रकार धन की सेवा है; यह धन जो हमारे लिये विषय-वासनाओं का कारण बना बैठा है, जो हमें शराब-कबाब की ओर ले जाता है, एक-दूसरे की हत्या, संहार और विनाश में लगा रहा है, जिसकी वजह से हम एक-दूसरे को हिकारत या तिरस्कार की नज़र से देखते हैं; जब इस धन को साध-संगत की सेवा में खर्च करते हैं तो हमारी कमाई सफल हो जाती है और इस धन में से हमारा मोह और प्यार निकलता है। इसी प्रकार गुरुमुखों के उसूल और सिद्धान्तों के अनुसार अपने मन को चलाना मन की सेवा है। गुरुमुख हमें जिस प्रकार जीवन को ढालने का आदेश देते हैं उसी प्रकार मन को रखना व ढालना मन की सेवा है। ये सभी सेवा हम इसीलिये करते हैं कि हम सुरत-शब्द की सेवा कर सकें, हमारी सुरत या आत्मा जाकर उस शब्द को पकड़ सके। असली सेवा तो सुरत-शब्द की सेवा है। पर बाहर की सेवा की भी महात्मा बहुत महिमा करते हैं; बल्कि गुरु साहिबानों ने,

सन्तों-महात्माओं ने ज़िन्दगी में स्वयं मिसाल बन कर दिखाया है। गुरु साहिबान का वृत्तान्त पढ़ कर देखें, किस प्रकार वे दूर-दूर से पानी की गागरें भर कर साध-संगत के स्नान के लिये लाया करते थे। किस प्रकार गुरु साहिबान लकड़ियाँ काट-काट कर संगत की सेवा के लिये लाया करते थे। आप कबीर साहिब का वृत्तान्त पढ़ कर देखें, किस प्रकार बलख-बुख़ारा के शाह ने आपकी बारह साल सेवा की। हुज़ूर महाराजजी (बाबा सावनसिंहजी महाराज) के 'परमार्थी पत्र' पढ़ें तो पता चलेगा कि किस तरह यहाँ (डेरा में) केवल एक झोंपड़ी थी, पर उनकी सेवा के प्रताप से डेरा कितनी उन्नति कर चुका है। यह सब उनकी सेवा का ही नतीजा है जिसका हम इतना लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

सो गुरु नानक साहिब समझाते हैं कि वह दौलत महात्मा हमें कब देते हैं? जब हम उनकी सेवा में लग जाते हैं, जब हम उनके उपदेश पर चलना शुरू कर देते हैं। किसी जौहरी की दुकान पर जवाहिरात का खरीददार जाता है तो जौहरी उसके सामने मूल्यवान हीरे-जवाहिरात निकाल-निकाल कर रख देता है। उसे पता है कि इस ग्राहक के पास पैसे हैं और वह इन्हें खरीदने का अधिकारी है। यदि उसके आगे कोई कंगाल चला जाता है तो जौहरी कभी उसे दुकान के अन्दर नहीं आने देता, हीरे-जवाहिरात दिखाने तो दूर रहे। सो हमें नाम रूपी रतन प्राप्त करने के लिये क्या कीमत देनी पड़ती है? हमें सतगुरु की सेवा रूपी कीमत देनी पड़ती है, उनके उपदेश पर चलना पड़ता है। जब हम उनके उपदेश के अनुसार अपने जीवन को ढालते हैं, सुमिरन और ध्यान के द्वारा अपने ख़याल को इकट्ठा करके आँखों के पीछे लाते हैं, तो सतगुरु हम पर नाम की दया कर देते हैं, शब्द की दया कर देते हैं।

धंनु वडभागी वडभागीआ जो आइ मिले गुर पासि ॥

आप फ़रमाते हैं, वे जीव बड़े भाग्यशाली हैं, बड़े खुशक़िस्मत हैं जो कि गुरुमुखों की संगति में आ जाते हैं, गुरुमुखों की शरण में आ जाते हैं, जो उनके आदेश के अनुसार शब्द और नाम के अभ्यास

में लग जाते हैं। गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'नानक जिन कउ सतिगुरु मिलिआ, तिनका लेखा निबड़िआ', कि जिनको गुरुमुख मिल जाते हैं, सन्तों-महात्माओं की संगति प्राप्त हो जाती है, उनके कर्मों का हिसाब-किताब समाप्त हो जाता है। गुरुमुखों का जो असली स्वरूप है वह शब्द है, नाम है। वह शब्द और नाम हमारी आँखों के पीछे दिन-रात धुनकारें दे रहा है। सो जब हम अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करते हैं, गुरुमुखों के नूरी अथवा ज्योतिर्मय स्वरूप के दर्शन करते हैं, तभी जन्म-मरण के दुःखों से हमारा छुटकारा होता है। इसी प्रकार स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं, 'सतगुरु शरन गहो मेरे प्यारे, करम जगात चुकाय' कि हमें सतगुरु की शरण और संगति प्राप्त करनी है, उनके उपदेश पर चलना है, अपने आपको बिना किसी शर्त के उनके सुपुर्द कर देना है, उनके कहने के अनुसार अपने जीवन को ढालते हुए अपने ख़याल को शब्द के साथ, जोड़ना है।

जिना सतिगुर पुरखु न भेटिओ,
से भाग हीण वसि काल ॥
ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि,
विचि विसटा करि विकराल ॥

अब आप समझाते हैं कि संसार में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं, एक गुरुमुख लोग हैं और दूसरे मनमुख। दोनों ही उस परमात्मा के बनाये हुए बन्दे हैं और यह भी उस परमात्मा के हाथ में है कि जिन्हें वह चाहता है उनको गुरुमुख बना देता है। लेकिन बड़ाई और महिमा किनकी है? केवल गुरुमुखों की। आप गुरुमुख किन्हें कहते हैं? जो सतगुरु की शरण में आ जाते हैं, उनकी सेवा में आ जाते हैं। ऐसे गुरुमुखों की आप ऊपर महिमा कर आये हैं जो सतगुरु के आदेश के अनुसार शब्द और नाम की कमाई में लगे हुए हैं। अब आप मनमुखों की अवस्था का वर्णन करते हैं कि 'जिना सतिगुर पुरखु न भेटिओ से भागहीन वसि काल'। जो सतगुरु की संगति में नहीं आते, उनके कथन के अनुसार मालिक की भक्ति

नहीं करते, शब्द और नाम का अभ्यास नहीं करते, अपने ख़याल को शराब-कबाब आदि में से नहीं निकालते वे बहुत ही खोटे भाग्य वाले हैं। क्यों खोटे भाग्य वाले हैं? क्योंकि उनको मौत के बाद काल के पंजे में फँसना है; उन्हें यमदूतों के साथ जाकर धर्मराज के सामने पेश होना पड़ेगा। जहाँ धर्मराज उचित समझता है वहाँ उन्हें जन्म दे देता है। एक देह के बन्धनों से छुटकारा नहीं होता, दूसरी देह का कलबूत पहले ही उनके लिये तैयार खड़ा होता है। उसमें आते ही हैं कि मौत आँखों के आगे आकर नाचना शुरू कर देती है। दस नम्बरी की तरह उनको हथकड़ी लगी ही रहती है। इसलिये आप फरमाते हैं कि मनमुख लोग बहुत खोटे भाग्यवाले हैं कि उन्होंने मनुष्य का चोला भी प्राप्त किया, चौरासी लाख जिया-जून के दुःखों के बाद उन्हें यह मुक्ति प्राप्त करने का मौक़ा भी मिला, परन्तु वे अपने बहुमूल्य समय को शराब-कबाब, विषय-विकार और इन्द्रियों के भोगों में ही नष्ट करके इस दुनिया से चले गये। उनकी क्या हालत होगी? 'फिरि-फिरि जोनि भवाईअहि' कि वे बार-बार जन्म लेंगे और बार-बार मरेंगे। उनकी यहाँ तक दुर्दशा होती है कि उन्हें विष्टा के कीड़े बनना पड़ता है और गन्दगी की नालियों में जाकर सड़ना पड़ता है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं:

सतगुरु न सेवहि मूरख अंध गवारा॥
फिरि ओइ किथहु पाइनि मोख दुआरा॥ (आदि ग्रन्थ, ११५)

जो गुरुमुखों की सेवा नहीं करते, उनके दिये हुए उपदेश पर नहीं चलते, वे मुक्ति किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं। वे मूर्ख हैं, अंधे और गँवार हैं। एक तो वे नेत्र-हीन हैं दूसरे अँधेरे में फँसे हुए हैं, कुछ दिखाई नहीं देता, रास्ते का उन्हें पता नहीं लगता, सिर पर पापों का बोझ उठाये हुए हैं और इसी अँधेरे में ठोकरें खा रहे हैं। अतएव आप प्यार के साथ समझाते हैं कि हमें गुरुमुखों की संगति में जाकर शब्द और नाम की कमाई करनी चाहिये।

ओना पासि दुआसि न भिटीऐ जिन अंतरि क्रोधु चंडाल॥

आप फ़रमाते हैं कि जिनका हृदय क्रोध रूपी चाण्डाल से भरा हुआ है, उनकी संगति ही नहीं करनी चाहिये। मनमुखों की संगति में नहीं जाना चाहिये ताकि उन्हें देख कर कहीं हमारे अन्दर भी वैसे ही भाव और विचार उत्पन्न न हो जायें, कहीं हम भी उनकी तरह ही शराब-कबाब, विषय-विकार आदि की इन लहरों में बहना शुरू न कर दें, क्योंकि हमारा मन संगति और सोहबत का असर बहुत जल्दी लेता है। आप मालिक के भक्तों और प्यारों की संगति करें, आपके अन्दर भी अपने आप मालिक की भक्ति का शौक और प्यार पैदा हो जायेगा। इसी प्रकार यदि चोरों की संगति करेंगे तो चोरी करने की आदत पैदा हो जायेगी। कितना ही परहेज क्यों न करें, दस दिन यदि शराब पीने वालों के पास बैठेंगे तो वैसे ही ख़याल हमारे मन में भी आने शुरू हो जायेंगे। हमारे मन को तो ठोकर लगती रहे, कोई इसे समझाता रहे तब कहीं जाकर हमारा ख़याल थोड़ा-बहुत परमात्मा की भक्ति की ओर जाता है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं :

साकत सूतु बहु गुरझी भरिआ किउ करि तानु तनीजै ॥
तंतु सूतु किछु निकसै नाही साकत संगु न कीजै ॥
(आदि ग्रन्थ, १३२४)

जो साकत अर्थात् मनमुख हैं उनके मन में कभी सब्र और सन्तोष नहीं आता, चाहे जो मरज़ी परमात्मा उन्हें दे दे। आप फ़रमाते हैं कि मनमुख पुरुषों का सूत गुत्थियों में उलझा पड़ा है, जिस सूत में इतनी गुत्थियाँ हों उस सूत से कपड़ा कैसे बुना जा सकता है। जब तक गुत्थियाँ नहीं सुलझतीं तब तक ताना कभी नहीं बुना जा सकता। इसी प्रकार मनमुखों का मन शराब-कबाब, विषय-विकार, दुनिया की शक्लों और पदार्थों के पीछे भागता फिरता है। उनकी संगति में जाकर हमारा ख़याल परमात्मा की भक्ति की ओर कैसे जा सकता है। इसलिये गुरु साहिब हमारी ओर से प्रार्थना करते हैं, 'गोबिंद जीउ सतसंगति मेलि हरि धिआईऐ' कि हे परमात्मा! सन्तों, महात्माओं की संगति दे ताकि हमारा

ख़याल तेरी भक्ति की ओर जाये, हमें तेरी याद आये।

महात्मा सत्संग किसे कहते हैं? जहाँ सिर्फ हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा किया जाता है। महात्मा उसे सत्संग नहीं कहते जहाँ एक कौम दूसरी कौम की निन्दा करती है, एक मज़हब दूसरे मज़हब के गले काटने की योजनाएँ बनाता है या जहाँ गुज़रे हुए राजा-महाराजाओं की कथा-कहानियाँ सुनाई जाती हैं। महात्मा कभी उसे सत्संग नहीं कहते। महात्मा के सत्संग में कभी किसी की आलोचना और निन्दा नहीं होती। वे तो सिर्फ हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक़ और प्यार पैदा करते हैं। वे हमारे ख़याल को हर प्रकार के बहस, सन्देह और भ्रम में से निकाल कर मालिक की भक्ति में लगाते हैं, शब्द और नाम के साथ जोड़ते हैं। सो गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि मन संगति और सोहबत का असर बहुत जल्दी लेता है, इसलिये जिनके अन्दर क्रोध रूपी चाण्डाल बसा हुआ है या जिनका ख़याल विषय-विकार, शराब-कबाब आदि की ओर फैला हुआ है उनकी हमें संगति और सोहबत ही नहीं करनी चाहिये।

सतिगुरु पुरखु अंमृतसरु वडभागी नावहि आइ ॥
उन जनम जनम की मैलु उतरै निरमल नामु दृड़ाइ ॥

किनकी संगति करनी चाहिये? आप फ़रमाते हैं कि सतगुरु की संगति करनी चाहिये, सन्तों-महात्माओं की संगति, गुरुमुखों की संगति करनी चाहिये। उनकी संगति क्या है? आप फ़रमाते हैं, वह अमृत का सरोवर है। हमारा ख़याल है कि अमृत के सरोवर में स्नान करने से ही हम निर्मल, पवित्र और अमर हो सकते हैं। इसी प्रकार गुरुमुखों की संगति, सन्तों-महात्माओं की संगति भी एक अमृत का सरोवर है। सो अगर आपको किसी सरोवर में जाकर स्नान करके अपने पापों का हिसाब-किताब समाप्त करना है, तो वह अमृत का सरोवर हमें कहीं बाहर नहीं मिलेगा। वह अमृत का सरोवर तो गुरुमुखों का सत्संग है, सन्तों महात्माओं की संगति है। परन्तु आप फ़रमाते हैं, 'वडभागी नावहि आइ' कि इस

अमृत के सरोवर में बहुत खुश किस्मत भाग्यशाली जीव ही नहाने के लिये आते हैं; नहीं तो हम सदा बाहर के पानी, बाहर के सरोवरों के लिये ही भटकते फिरते हैं। जिस सरोवर का महात्मा ज़िक्र करते हैं, वह सरोवर तो हमारे हरएक के शरीर के अन्दर है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'काया अंदरि अमृतसरु साचा' कि भाई, वह सच्चा अमृतसर तो तेरे शरीर और तेरी देह के अन्दर है। हम बाहर के सरोवरों और तीर्थों का भी आदर करते हैं। इन स्थानों पर बैठकर गुरु साहिबों ने, सन्तों-महात्माओं ने शब्द और नाम का प्रचार किया है, हमारे ख़याल को हर प्रकार के भ्रमों और सन्देहों से निकालने की कोशिश की है। इसलिये ये स्थान भी हमें प्रिय लगते हैं। परन्तु जिस सरोवर में स्नान करके हमें मुक्ति प्राप्त करनी है, वह बाहर का पानी कभी भी नहीं हो सकता। बाहर का पानी कितना ही निर्मल और पवित्र क्यों न हो, वह हमारे शरीर का मैल उतार सकता है, पर यह जो पापों का मैल है, गुरु साहिब फ़रमाते हैं, 'धोपै नावै कै रंगि'—वह मैल तो नाम के अभ्यास के द्वारा ही धोया जा सकता है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

एहु सरीरु सरवरु है संतहु इसनानु करे लिव लाई ॥
नामि इसनानु करहि से जन निरमल सबदे मैलु गवाई ॥
(आदि ग्रन्थ, ९०९)

भाई! यह जो तेरा शरीर है यही असली सरोवर है। अगर तुझे सरोवर में जाकर स्नान करना है तो शरीर के अन्दर जाकर स्नान कर। कौन-सा स्नान करना है? शब्द के अभ्यास का स्नान, नाम के अभ्यास का स्नान। इस स्नान के द्वारा ही तेरे बाहर के तथा आन्तरिक मैल उतरेंगे, तभी तेरी आत्मा निर्मल, स्वच्छ और पवित्र होवेगी। हम दुनिया के जीव हमेशा बाहरमुखी हुए रहते हैं। हम समझते हैं कि हर अमावस्या या पूनम को जाकर सरोवर अथवा नदी में स्नान कर लें, पिछले सब पाप दूर हो जायेंगे, अगले महीने के लिये फिर छुट्टी मिल जायेगी। परन्तु महात्मा हमें बाहरमुखी नहीं करते, कर्म-काण्ड में नहीं फँसाते। वे समझाते हैं

कि जिस सरोवर में जाकर आपको स्नान करना है, वह सरोवर मालिक ने आप सबको बख़्शा हुआ है। अगर हिन्दुस्तान के किसी कोने में किसी सरोवर में स्नान करने से मुक्ति हो सकती है तो यह तो बहुत अनुचित बात है। उस परमात्मा की दुनिया तो लाखों मीलों में फैली हुई है; जो लोग कभी हिन्दुस्तान आ नहीं सकते, कभी यहाँ पहुँच नहीं सकते, क्या वे कभी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते, क्या वे कभी जाकर परमात्मा से मिल ही नहीं सकते? परमात्मा ने तो अपने पास पहुँचने का सबके लिये एक जैसा कुदरती कानून बनाया है। अतएव जिज अमृत के सरोवर का महात्मा ज़िक्र करते हैं वह अमृत का सरोवर हम सबके शरीर के अन्दर है, परन्तु गुरु साहिब फरमाते हैं कि वे भाग्यशाली जीव हैं, खुश किस्मत जीव हैं जो अपने खयाल को, अपने मन को बाहर के सन्देहों तथा संकल्पों में से निकाल कर, भ्रमों से निकाल कर देह और शरीर के अन्दर जाकर उस नाम का स्नान करते हैं, गुरुमुखों की संगति का फायदा उठाते हैं। आप फ़रमाते हैं कि इस सरोवर में स्नान करने से एक जन्म का मैल नहीं, जन्मों-जन्मों का मैल उतर जाता है। जो हमारे संचित कर्म हैं, जो हम पिछले अनेक जन्मों से अपने पापों को इकट्ठा करते आ रहे हैं, उस सब कर्मों का, सब पापों का हिसाब-किताब खत्म हो जाता है।

गुरु नानक साहिब बहुत सुन्दर उदाहरण देते हैं कि हम लकड़ियों का ला लाकर कितना ही बड़ा ढेर क्यों न इकट्ठा कर लें, आग की एक चिनगारी सारी लकड़ियों को जला कर राख कर देती है, सारे ढेर को भस्म कर देती है। यही कबीर साहिब फ़रमाते हैं कि तुम सूखे घास का चाहे जितना बड़ा ढेर क्यों न लगा लो, नाम की एक कणी उन सब कर्मों का हिसाब-किताब खत्म कर देती है, सारे घास को जला कर राख कर देती है। इसीलिये गुरु नानक साहिब हमें बार-बार इसी विषय पर लाते हैं कि भाई! जो कुछ भी तुझे मिलेगा, वह गुरुमुखों और महात्माओं की संगति में जाकर नाम की कमाई करने से मिलेगा। उस शब्द

के अभ्यास द्वारा तेरे संचित कर्मों का हिसाब समाप्त हो जायेगा, तेरी आत्मा निर्मल और पवित्र हो जायेगी और मालिक से मिलने के योग्य बन जायेगा।

जन नानक उतम पदु पाइआ सतिगुर की लिव लाइ ॥

अब आप फ़रमाते हैं कि जिन्होंने सारी दुनिया में से प्यार ओर मोह को निकाल कर एक सतगुरु के साथ मोह और प्यार कर लिया है, सतगुरु के साथ लिव लगा ली है, उनको ही उत्तम पद प्राप्त होता है। कौन-सा उत्तम पद प्राप्त होता है? ऊपर समझा चुके हैं कि उनके संचित कर्मों का, सभी कर्मों का लेखा समाप्त हो जाता है, उनकी आत्मा स्वच्छ, निर्मल और पवित्र हो जाती है, परमात्मा से मिलाप प्राप्त करने के योग्य हो जाती है।

गुरु साहिब ने इस शब्द में बड़ी अच्छी तरह स्पष्ट करके हमें समझाया है कि हमें क्यों मालिक की भक्ति करना है, किस प्रकार मालिक और परमात्मा की भक्ति करना है, वह शब्द और नाम क्या चीज़ है, कहाँ जाकर शब्द और नाम की कमाई करने के भेद और साधन का पता लगता है, किस प्रकार हम दुनिया के जीव बाहरमुखी हुए बैठे हैं, किस प्रकार कर्मकाण्ड में फँसे हुए हैं, किस प्रकार गुरुमुखों की संगति में जाकर इस कर्मकाण्ड से, बाहरमुखता से हमारा मन निकलता है, हम शब्द की खोज में लगते हैं, नाम की खोज में लगते हैं। अतएव हमें भी चाहिये कि गुरु साहिब के उपदेश के अनुसार अपने ख़याल को शब्द के साथ जोड़ कर रखें, नाम के साथ जोड़ कर रखें।

सत्संग—८

महाराज चरनसिंह जी

★

तीसरी बार : फर्वरी १९८१—१७,००० मूल्य : ३० पैसे।

★

प्रकाशक : एस. एल. सोंधी

सेक्रेटरी, राधास्वामी सत्संग, ब्यास।

मुद्रक : अरविन्द प्रैस, फतेहपुरा, जालन्धर।